# अब भी एक गाँव में रहती है वह...

हुश्न तवस्सुम निहाँ

# अब भी एक गाँव में रहती है वह...

मेरी आवारगी में कुछ दखल उनका भी है।

https://www.hindiadda.com/ab-bhi-ek-gaanv-me-rahati-hai-vah/

उनकी याद आती है तो घर अच्छा नहीं लगता।

शिप्रा दौड़के उस घर में घुस गई और भीतर से सड़ाक से कुंडी चढ़ा ली।

दरवाजे पर बच्चों की टोली धमाल मचाए थी।

'शिप्रा दी खोलो... आओ ना बाहर...'

मिसेज डिसूजा भाग कर किचन से बाहर आईं -

'ओह बेटा... क्या बात है...?'

'देखिए ना आंटी, सब तंग कर रहे हैं। मेरा दुपट्टा छीन रहे हैं... बताइए भला मैं अपने ससुर के सामने नंगे सिर जाऊँगी...'

'ओ.के... ओ.के... चलो बैठक में बैठो, मैं तुम्हारे लिए चाय लाती हूँ।'

कहती हुई वह किचन में चली गईं और शिप्रा बैठक की तरफ दौड़ गई। कुछ क्षण बाद मिसेज डिसूजा चाय की ट्रे लेके पहुँची बैठक में, तो शिप्रा गायब...। वह समझ गई कि वह बैडरूम में होगी। वह वहाँ पहुँची तो देखा शिप्रा कास्टमेटिक की दुकान खोले बैठे है। कई-कई शेड्स के पाउडर चभोड़े। लिप्सटिक चूड़ियाँ-झुमके सब लपक-लपक के उसके जिस्म पर सज गए थे। वह बिल्कुल नई-नवेली दुल्हन सी लग रही थी। मिसेज डिसूजा दूर से ही देख-देख मुस्कराती रहीं। वह मगन थी। कोण बदल-बदल के आईना निहार रही थी। तभी सायास उसकी निगाह मिसेज डिसूजा पर पड़ी तो वह पुलक उठी -

'आंटी, अच्छी लगती हूँ ना...!'

'सो ब्यूटीफूल डार्लिंग... अब आओ चाय पी लो...।'

'आती हूँ आंटी, सिंदूर की डिबिया कहाँ है... ओह... मिल गई...।' तर्जनी और अँगूठे से चुटकी बना के उसने क्षण भर में माँग भर दी। गोरे, तीखे नैन-नक्शवाला चेहरा फूट निकला था। 'दुल्हन बनेगी, तो बड़ी प्यारी लगेगी...' एक पल को मिसेज डिसूजा ने ठहर कर सोचा। फिर उसका हाथ पकड़ बोलीं -

'अब सब हो गया। बहुत अच्छी लग रही हो, चलो चलते हैं बाहर...।'

बैठक में आके बैठी ही थी कि डोरबेल घनघनाई, मिसेज डिसूजा पलट कर दरवाजा खोलने गईं। वह पलटीं तो भीतर से आवाज आई -

'आंटी, कौन है...?'

'अंकल...'

'कौन, शिप्रा है क्या?'

'हाँ, अभी आई है।' कहती हुई वह मिस्टर डिसूजा के साथ बैठक में दाखिल हुईं।'

'हाय शिप्रा!'

'हाय... अंकल...!'

वह टाई ढीली करने लगे कि शिप्रा चहकी -

'अंकल, मुझसे शादी करोगे...?'

'शिप्रा...।' मिसेज डिसूजा चिल्लाई। मिस्टर डिसूजा असहज से होते हुए तेज-तेज कदमों से बाहर निकल गए। फिर वह समझाने के लहजे में बोलीं -

'शिप्रा बेटे, वह अंकल हैं, अंकल से शादी नहीं होती...'

'फिर किससे होती है?'

'...' उन्हें जवाब ही ना सूझा। वह फिर बोली -

'तो आंटी ऐसे कहतीं, डाँटती क्यूँ हो...?'

मिसेज डिसूजा भीतर-भीतर कैसली पड़ गईं और चुप लगा गईं। अभी वह भीतर ही भीतर कुछ रख उठा रही थीं कि धड़ से मुख्य द्वार खुला और शिप्रा की माँ हाजिर। सीधी बैठक में पहुँची और सिर पीट लिया।

'आए... हाय... करमजली... मुँहजली... राँड़ की माँ... कैसा चमक के बैठी है, जैसी अभी-अभी भरतार के यहाँ से आई हो... तनि सजावट तो देखिए... माँग में सिंदूर... हाय राम, मुँहजली ने थुकवा डाला।' कहते हुए उन्होंने दोहत्था घुमा के दिया पीठ पे। शिप्रा ने दौड़ के मेज पे लगे फलों की टोकरी से चाकू उठा लिया।

'अम्मा, आज तुझे ही खत्म कर दूँ। तू ही जड़ है...'

मिसेज डिसूजा के पसीने छूट गए। चीखीं -

'जरा देखिए... गजब हो गया... जल्दी आइए...'

एक झोंक से मिस्टर डिसूजा दाखिल हुए और आँख झपकते उसे कस कर पीछे से पकड़ लिया। चाकू छीना। वह गुस्से और कुछ दौरे के प्रभाव के कारण थर्रा रही थी...।

'अंकल, इसको नहीं छोड़ूँगी। अम्मा को नहीं छोड़ूँगी...।'

दोनों पति-पत्नी ने मिल कर माँ-बेटी को शांत किया फिर मिसेज डिसूजा ने संयत होते हुए शिप्रा की माँ के सामने एक बड़ा सा क्वश्चन मार्क खींच दिया -

'शिप्रा की माँ, शिप्रा की शादी क्यूँ नहीं कर देतीं...।'

'बहन जी, किसके सिर थोप दूँ, क्या घोड़े-गधे के गले बाँध दूँ। बाप को तो चिंता ही नहीं कि उसने बेटी पैदा की है। अपने कामों से ही चिपका रहता है। और माँ-बाप के होते, बेटे क्यूँ लेंगे जिम्मा। दो बहुएँ हैं, दोनों नागिन। पैंतीस साल की हो गई है, कौन करेगा ब्याह...? वो भी इस हाल में।'

'मेरा मतलब था कोई डाइवोर्सी या विडोवर ही...।'

'आप भी क्या बात करती हो बहन जी, हम अपनी कुँवारी बेटी को रँडवे के साथ ब्याहेंगे... इससे बेहतर है बैठी ही रही। मेरे घर भी खाना है...'

'तब तो ये ठीक हो चुकी। आप लोग चाहते ही नहीं हैं...।'

'तो क्या ब्याह से ये ठीक हो जाएगी, इसका प्रेत उतर जाएगा? मैंने कई ओझा और पंडित कर रखे हैं। ऐसे-ऐसे मंत्र पढ़ेंगे कि...। वो आठ-दस साल पहले एक नए जोड़े का एक्सीडेंट हो गया था ना... सामनेवाली रोड पर। दोनों चल बसे। बस, वही दुल्हन की आत्मा पूरे मोहल्ले में तांडव मचाए है। कच्ची जान थी ना...।'

'हो सकता है, लेकिन अधिक समय तक अविवाहित रहना भी लड़कियों की ऐसी स्थिति का कारण बन सकता है...।'

'नहीं बहन जी, ऐसा नहीं है। हम शरीफ लोग हैं। लड़कियाँ हमारे यहाँ बोलना तक नहीं जानतीं। बस, खा-पका के अपने कमरों में, दुनिया से फिर कोई सरोकार नहीं...।'

'इसीलिए, बस यही कारण है...'

'वकील साहब की रेशमी, चंदा, कित्ती-कित्ती उम्र की हैं, डॉक्टर साहब की मधु चालीस से क्या कम है वे भी कुँवारी हैं, पर कभी ये हालत हुई। जबकि वे बाहर हटो-हटो घूमती भी हैं, नौकरी भी करती हैं...'

'इसीलिए, बस, यही कारण है। उन लड़कियों का समाज से सीधा सरोकार है। वे सीमित नहीं हैं। कुंठित और अवसादित नहीं है। उनके पास जीने के खुश रहने के हजारों बहाने हैं। जबकि शिप्रा जैसी लड़कियाँ एक दमघोंटू कांप्लेक्स में जी रही है। इसके पास जीने की वजह ही नहीं है। ऐसी लड़कियाँ एडजस्ट नहीं कर पातीं। हिस्टीरिया के दौरे भी इन्हें ही पढ़ेंगे। पागलपन के दौरे भी इन्हें ही पड़ेंगे। और...

'आगे कुछ कहतीं, कि शिप्रा की अम्मा उछल पड़ीं -

'अरे ओ छोलहट, फिर दर्पन निहारने लग गई। देखिए... देखिए बहन जी... बेहयाई की भी कोई सीमा होती है।' और शिप्रा का हाथ पकड़ कर खींचती हुई बाहर निकल गई। मिसेज डिसूजा लुटी-पिटी सी खड़ी रह गईं। मिस्टर डिसूजा ने छेड़ा -

'यार मीना, ये सब क्या है...'

'है क्या, अच्छी-भली लड़कियाँ थीं। परिवार की लापरवाही और वर्जनाओं की बलि चढ़ा दी गईं लड़कियाँ। कितनी शालीन, सभ्य और मितभाषी लड़कियाँ थीं।'

'वो सब छोड़ो हमारे दूसरे बच्चे तो परिवारर बना के बाहर शिफ्ट हो गए। उनका नहीं टेंशन। मगर हमारा रजत अभी बच्चा है। संवेदनशील भी है। उस पर इन चीजों का प्रभाव पड़ेगा...।'

'तुम्हारी बात ठीक है, मगर वे भी तो हमारी बेटियों जैसी हैं। हमारे घर बचपन से आती रही हैं। उन्हें कैसे मना कर दूँ और वो भी क्या मान जाएँगी?' - तभी बैठक के बाहर हलचल सी हुई। वह देखने के लिए जब तक बाहर निकलतीं, चलनेवाले पाँव स्वयं सामने आ कर खड़े हो गए वे सकते में थी। सामने अप्सरा खड़ी थी।

'गुड ईवनिंग आंटी।'

'अ...अरे... समीरा... तू... तू तो बहुत सुंदर लग रही है। दुल्हन जैसी।

'सच आंटी?'

'हाँ सच्ची।' कहते हुए मिसेज डिसूजा ने समीरा को वहीं पकड़ कर सोफे पर बैठा दिया। वह मुस्कराई।

'आंटी, आज बहुत खास दिन है।'

'अच्छा, तेरी बर्थ डे है।'

'नहीं आंटी, उससे भी खास दिन... पहले बताइए, रजत कहाँ है?'

'वो तो स्कूल गया है।'

'उफ्... आज के दिन भी...।'

'क्यों, ऐसा क्या हुआ है आज...?'

'अरे आंटी, आज, आज रजत से हमारा निकाह है।'

'हे... ईश्वर...' मिसेज डिसूजा सकपका गईं। मिस्टर डिसूजा ने एक तीखी निगाह से उन्हें देखा। वह अकबकाई सी बोलीं -

'समीरा... वेरी बैड... वह तुम्हारा भाई है... बेटे...'

'तो क्या हुआ आंटी, मैं तो उसी से शादी करूँगी। ये देखो, 'कहती हुई उसने अपनी हथेली आगे बढ़ा दी जिस पर मेहँदी से लिखा था - 'रजत, आई लव यू...' और कहीं-कहीं पेन से।

वह कुछ नहीं बोलीं। मिस्टर डिसूजा ने शोखी की -

'मिसेज मीना डिसूजा, अब आप बहुत जल्दी पति और बच्चे से हाथ धोनेवाले हैं। फिर मत कहना।' वह निर्विकार भाव से पति और समीरा को बारी-बारी देखती रहीं। मिस्टर डिसूजा बाहर चले गए। मिसेज डिसूजा कसैली हो गईं। समीरा उलट-पुलट के अपनी चूड़ियाँ, पायल, सुर्ख लहँगा और चुनरी को आँखों ही आँखों में सराहे जा रही थी। तभी बाहर लॉन से पुकारा गया -

'रजत की मम्मी... क्या समीरा आई है?'

वह कुछ बोलतीं, इससे पहले समीरा ही बोल पड़ी -

'हाँ अम्मी, आई हूँ... आज शादी है मेरी।'

दनदनाती सी समीरा की अम्मी सीधी बैठक में दाखिल हुईं और वही किया जो शिप्रा की अम्मा ने किया था। आते ही दो हत्था जड़ दिया और चीखीं -

'बेशरम, बेहया, गलीज... अब यही बाकी रह गया था...'

मिसेज डिसूजा फुर्ती से बीच में आ गईं।

'आप बैठिए भाभी, मैं चाय लाती हूँ...' समीरा की अम्मी समीरा की ही बगल में सोफे में धँस गई।

'शुक्रिया रजत की मम्मी, शुक्र है आप लोगों के यहाँ ही आती है वर्ना कब की नाक कट चुकी होती।' मिसेज डिसूजा बाहर चली गईं। समीरा की अम्मी उसे लानत मलामत करती रहीं। आखिर समीरा उठ कर के किचन में ही चली गई। फिर मिसेज डिसूजा के साथ कमरे में आई वापस। तीनों खामोशी से बैठ कर चाय पीने लगीं। समीरा बीच-बीच में मुग्ध हो जानेवाली निगाहों से अपने-आपको सहलाती, सराहती रही। अपना झूमर चोटी ठीक करती रही। अम्मी बोलीं -

'बताइए बेगम साहिबा उन खटीकों के यहाँ तीन नए सूट दे कर उनका ये लाल जोड़ा ले आई है। ...वो ..जिनके यहाँ का हम पानी नहीं पीते। अभी उन्हीं के वहाँ का लड़का बता गया है, और कपड़े वापस कर गया है। और अब भाई-बाप के सामने सज-धज के घूम रही है...'

'आप मेरी मानो भाभी, जितनी जल्दी हो सके इसकी शादी कर दो, सब ठीक हो जाएगा घर-गृहस्थी में फँसेगी तो पागलपन बिला जाएगा।'

'हाँ... वही तो मैं भी कह रही हूँ...।'

'चुप... चुड़ैल कहीं की, बेहया माटी मिली...' अम्मा गरजीं। समीरा की बोलती बंद। अम्बा बोलीं।

'बेगम साहिबा, इस हालत में किसके गले मढ़ दूँ... इसे, कौन हाथ पकड़ेगा जब सब कुछ ठीक था तब ना हुआ तो...'

कुछ सोच में पड़ गईं फिर बोलीं।

'वैसे झाड़-फूँक चल रही है। डाक्टर, हकीम नजूमी कुछ बाकी नहीं छोड़ रखा है। अब देखिए किससे शिफा मिलती है। हजार रुपए लाश-ए-पनाहवाले बाबा को दे आई हूँ। वह भी दुआ कर रहे हैं...'

'इससे बेहतर आप इसे किसी मनोचिकित्सक को दिखातीं...'

'अरे बेगम, क्या कहती हो, गजब हो जाएगा। ये कोई पागल-वागल थोड़े ही है। दस जिन्नों का साया है... पूरे दस...। मेरी देवरानी है ना, पूरी जादूगरनी। ये चुड़ैल हर वक्त चची के पास घुसी रहती थी। उसी ने कुछ खिला-पिला दिया। अब देखिए हाल तक पूछने नहीं आती। बल्कि इसकी हरकतें सुन-सुन हँसती रहती है।'

मिस्टर डिसूजा, जो बैठक में कुछ तलाशने आए थे, एक तंजिया निगाह से पत्नी को देखा और सिर हिला के बाहर निकल गए।

मिसेज डिसूजा ने उनकी अनदेखी करते हुए बात जारी रखी -

'समीरा के लिए रिश्ते तो आते ही होंगे...'

'अजी बिल्कुल आते हैं। एक नहीं दस-दस आते हैं। लेकिन इनके अब्बू की टिन्न। करेंगे तो चीफ मिनिस्टर के ही यहाँ। और तो लड़कियाँ अप्सराओं को मात करती थीं। उनके उठते देर ना लगी। लेकिन अब ये उनकी बनिस्बत कमजोर है तो थोड़ा समझौता ही सही। उठ तो जाएगी। मगर कहाँ... और अब ये नौबत आ गई, अब तो रिक्शावाला भी नहीं पूछेगा। सवाल ही नहीं। मैं कहती हूँ बेगम, जब हम बच्चे ही ना बना पाए तो क्या बनाया... खाक, ऐसी दौलत पे लानत है...'

हठात दरवाजा खुलता है। सामने एक आठ-दस साल का बच्चा स्कूली यूनिफार्म पहने दाखिल हुआ और तीर की तरह समीरा से जा लिपटा।

'समीरा आपा...'

'आ... गया मेरा दूल्हा... मेरा रजत देख कब से बैठी हूँ तेरे इंतजार में। ये देख निकाह का जोड़ा... मेरी चूड़ियाँ देख, मेरी चोटी... चल, आज हम शादी कर लेते हैं...'

मिसेज डिसूजा बगलें झाँकने लगीं। अम्मी, पहले तो झेंपी, फिर लपक कर धरा तमाचा।

'बेहया... अगर सही उम्र में तेरी शादी हुई होती तो इसकी उम्र का तेरा बच्चा होता। या मौला... ये क्या दिखा रहे हो... इज्जत रेजी...।'

- मिसेज डिसूजा बढ़ीं छुड़ाने के लिए। तब तक अम्मी समीरा के बालों को हाथ में लपेट कर बाहर खींच ले गईं।

मिसेज डिसूजा की आँखें भर आईं...

'हे ईश्वर... इन लड़कियों को पार लगा।'

घर पहुँच कर समीरा की अम्मी ने समीरा को इत्ती जोर से ढकेला कि वह दीवार से टकरा के मुँह के बल गिरी सिर दीवार से टकरा के चिटक गया। चूड़ियाँ टूट गईं। खून बह निकला। छोटे भाई सिराज ने पास पड़ा एक डंडा उठाया और उस पर टूट पड़ा। वह पिटती रही। कुछ देर तक चला ये तमाशा फिर वह डंडा फेंक कर कमरे में चला गया। वह आँगन में बैठी बेढब आवाज में बच्चों की तरह फूट-फूट रोए जा रही थी। शोर-शराबा सुन इधर-उधर की औरतें जमा हो गईं। घर की खादिमा, जो खादिमा कम घर की मेंबर ज्यादा मानी जाती थीं, हलीमा बाई दौड़ कर चूना गर्म कर लाईं और उसके सिर में थोपते हुए बड़बड़ाने लगीं -

'छोटे, ये तुमने अच्छा नहीं किया, वह क्या अपने आप में है। बेचारी, मजबूर। या...पीर बाबा... या जो भी शख्स हों इस मासूम का पीछा छोड़ दें। लड़की जात... हम सब बर्बाद हो कर रह गए हैं...'

बहन... बाहरवालों ने तो कभी चूँ की आवाज ना सुनी। बाहर की दुनिया क्या होती है, ये क्या जाने। घरवाले ही इसकी आवाज सुनने को तरसते थे। अब बताइए...'

'अब बाजी, ये पाकीजा रूहें ऐसे ही पाक साफ परहेजगार लोगों की तो सवारी करती है। जिन्न-जिन्नात तो खासकर...'

समीरा अपनी ही धुन में थी

'मैं रजत से ही शादी करूँगी, चाहे मुझे काट डालो... आई लव यू... आई... लव... यू रजत...' हलीमा बाई ने उसके मुँह पे हथेली पूरी ताकत से जमा दी कि समीरा दम घुटने की सी स्थिति लिए छटपटाने लगी। समीप खड़ी औरतों ने मुँह पे दुपट्टे का कोना दबा लिया और धीमे-धीमे हँसने लगीं।

'नहीं बेटी... बुरी बात...' कहती हुई हलीमा बाई समीरा को अपने कमरे में खींच ले गईं।

वास्तव में समीरा एक सुलझी हुई सीधी सादी कमजोर सूरत-शक्लवाली लड़की थी। रूढ़िवादिता व परंपरागत वर्जनाओं से ग्रस्त परिवार। पिता के चार ट्रांसपोर्ट। इसके अलावा वह मौलाना थे। जिससे प्रायः शहर के बाहर ही रहते। घर से ताल्लुकात नॉमिनल। कम बोलते, कम खाते। कम सोते। अपना मदरसा था। ज्यादह वक्त वहीं बिताते। चालीस-चालीस दिन या छह-छह महीने के चिल्ले पर चले जाते। कारोबार बेटे सँभालते। बाप के नक्शे-कदम पर चलते हुए वे भी आध्यात्म के रास्ते पर चल रहे थे। लंबी-लंबी दाढ़ियाँ, ऊँचे-ऊँचे पाजामेवाले। चार भाई। चार बहन। समीरा एक बहन व एक भाई से बड़ी थी। उससे बड़े भाई-बहनों की शादियाँ हो चुकी थीं। बल्कि छोटावाला सिराज कुछ महीने पूर्व इस्तिमा में गया तो वहीं से किसी लड़की से प्रेमविवाह करके ले आया था। अम्मी ने उस वक्त काफी मुखाफलत की थी। अगर भाइयों ने रहने दिया तब बाप की क्या मजाल। वास्तव में वो लड़की गैर-बिरादरी थी। मगर सिराज ने इस्तेमाई बुद्धि का लाभ उठाते हुए कहा -

'हमारे पैगंबर ने जाँत-पाँत, ऊँच-नीच सब पैरों के नीचे रौंद दिया था।'

सही भी है। लोगों ने मान लिया। समीरा दुर्भाग्य से थोड़ी कमजोर शक्लो-सूरत वाली 32-33 वर्षीय युवती। कुछ-कुछ ओवरवेट भी। चेहरे पर अजब किस्म के खुरदुरे से नन्हें-नन्हें पिंपल्स। जो खत्म कम होते उभरते ज्यादा। इस कारण भी उसमें आत्महीनता और कुंठा घर कर गई थी। नितांत अंतर्मुखी। घर में कोई भी आए-जाए, समीरा से नहीं मतलब। वह चूल्हे में घुसी रहती। बहनें लाव-लश्कर के साथ आतीं तो वह मशीन बन जाती। ब्याही होने के कारण उनमें चार चाँद लग गए थे। बच्चों व पतियों के साथ पलँग पर बैठी-बैठी हुक्म चलाती रहतीं। और वह हलीमा बाई के साथ लगी उनके हुक्म की तामील करती जाती। रात को सभी अपने-अपने दड़बों में। हलीमा बाई दुमंजिले पर की अपनी मड़ैया में सो रहतीं। बरामदे में वह और छोटी बहन रेशमा सोतीं। सोतीं क्या, रेशमा तख्त के दूसरे कोने पे लेटती और चादर में मुँह लपेट कर भीतर-भीतर मोबाइल पे अपने मंगेतर से खुसर-पुसर शुरू कर देती। शायद इसीलिए उसे रात की तम-फिजाँ की हमेशा प्रतीक्षा रहती। तब से, जब से उसके खालजाद भाई से उसकी मँगनी हुई थी। कभी-कभी समीरा कुढ़ती और उकताती। कभी झुँझला कर दूसरे ओसारे में चली जाती। उस ओसारे से लगे हुए पाँच कमरे थे। पाँचों के दरवाजे-खिड़की बरामदे में ही खुलते थे। हालाँकि रात के वक्त भीतर से लॉक रहते। मगर भीतर की खसर-पसर दरीचों से रेंग आती जो उसके होश उड़ा देती। एक

विषैली और अलग ही किस्म की अहसासें कमतरी या फेंक दिए जाने की लिजलिजी भावना उसमें घुलने लगती। वह छत पर जाती। दुमंजिले पर जाती। जी होता यहीं से छलाँग लगा दे और मुक्त हो जाए इस शापित जीवन से। वह समझ नहीं पाती, क्या देह के कीम-खाब ही आदमी की जगह तय करते हैं। क्या कमजोर सूरत इंसान अपनी कामनाओं में भी कमजोर होता है। क्या उसे बसंत भर जी लेने का हक नहीं। और जब पोर-पोर कोई नैसर्गिक डिमांड करे तब? तब क्या किया जाए। एक दिन रन्नो किसी फिल्म की कहानी सुना रही थी। वह आलू के चिप्स काटती सुनती जा रही थी रन्नो ने कहा -

'और बस, धर्मेंद्र को तनूजा से प्यार हो गया...।'

इतना कहा था कि उसके हाथ थम गए

'धर्मेंद्र की छोड़, रन्नो ये बता तुझे किसी से मुहब्बत है...?'

रन्नो के चेहरे पर कासनी रंग घुल गया

'है... है क्यूँ नहीं... क्यूँ?'

'उससे शादी करोगी...?'

'हालात और किस्मत ने साथ दिया तो बिल्कुल करूँगी...'

'और नहीं दिया तो...?'

'ये मैंने कभी सोचा ही नहीं। वैसे जिंदगी में किसी का होना बहुत बड़ी बात होती है। यही 'होना' आदमी को जिंदगी से बाँधे रहता है। मैं तो कहती हूँ हर किसी को जिंदगी में एक बार मुहब्बत जरूर करनी चाहिए। बाद में जिंदगी के लस्त-पस्त दौर में यही मीठी यादें जीने का खूबसूरत सहारा बनती हैं...' वैसे, तुम क्या जानो ये सब... तुम्हारा तो दुनिया से राबता ही नहीं। ना कभी कहीं जाना ना आना... पता नहीं कैसे बारहवीं तक पढ़ ही गई हो... बस, ले दे के इस्तिमा कर आती हो वो भी 'अम्मी' के साथ। जीते जी मुर्दा हो गई हो। जिधर हकाल दो चली जा रही हो... अपने जज्बात को जरा खुली हवा में साँसें लेने देतीं... अपने ही दायरे में लुंज-पुंज होके पड़ी हो। अपना कोई शौक नहीं, कोई ख्वाहिश नहीं, नफ्स नहीं। सबको मार के बैठी हो... सबको मुर्दा कर लिया तुमने। हद हो गई... हुँ...ह... ऊँचा खानदान... ऊँचा घराना... ऊँची दीवारें... ऊँची मीनारें... ऊँची रिवायतें... और ऊँचे-ऊँचे... दर्द...'

'तो क्या करूँ... मेरी सूरत और मेरा ढलता वक्त देखो...।'

'कैसी सूरत... कैसा ढलता वक्त, तेरा वक्त मेरे वक्त का हमजोली है। फिर तेरे वक्त ने कौन सा गुनाह कर डाला। तू बस अपनी नफ्स मार रही है और कुछ नहीं। ...क्या मुझे नहीं पता, भूरे का छोटा बेटा हसन्नू तुझसे कितनी मुहब्बत करता था, तू भी करती थी। मगर तेरी ऊँची दीवारों ने उसे घर में घुसने की इजाजत नहीं दी। और तूने उन्हीं दीवारों की ऊँचाई को अपना नसीब मान लिया और अपना कत्ल कर लिया... कसूरवार कौन। जैसे ये चिप्स काट रही है वैसे ही तूने खुद को परत-दर-परत कुतर डाला है।

उसके बाद देर तक चुप्पी रही। रन्नो की दो-टूक सुनाने पर वह हैरान थी। पता नहीं कब रन्नो उठ कर चली गई थी। वह मन ही मन बिसूरती किसी कमरे में घुस गई। हालाँकि... अब कमरों में वह कम ही जाती है। कमरों से नफरत सी है। खासकर बैठक से। जाने कितनी बार इस बैठक में वह नाश्ते की सीनियाँ लिए दाखिल हुई है। लेकिन हर बार मुँह की खानी पड़ी। फिर उसने तौबा कर ली। और कितनी उपेक्षाएँ और कितना तिरस्कार और कत्लेआम अँधेरे कमरे में पड़े दीवान पर गुड़-गुड़ पड़ी बुखार और अपमान की ज्वाला में तप रही थी। कौन ले खबर। उस फकीर ने क्या कहा था - 'तेरा सूरज सातवें आसमान पर है।' - अब ये कौन-सा आसमान है...?

हलीमा बाई के हिलाने-डुलाने पर वह होश में लौटी। काम का वक्त हो गया था। सीधी किचन में जा कर खटपट करने लगी। किंतु निहायत संजीदगी और खामोशी से उड़ी-उड़ी तबियत लिए। खुमारी के बीच डूबी कब सब कम निबटाया खबर ही नहीं। खा-पी के सब सोने चले गए। वह उठी, जाने क्या सूझा, रेशमा के सिरहाने रखे तकिए के नीचे से अमश की तस्वीर निकाल लाई और किचन में जो, पीढ़े पर बैठ सम्मोहित सी तस्वीर देखने लगी। देखती रही, देखती ही रही...। जैसे उसे पूरी तरह अपने अंतस में उतार लेना चाहती हो। रेशमा लेटी तो हस्ब-ए-मामूल दीदार-ए-यार करना चाहा। मगर तस्वीर गायब। हड़बड़ा के उठ बैठी। तव्वा गई। कुछ नहीं। ये आपा का ही काम है। फिर भी यहाँ-वहाँ ढूँढ़ा। नहीं मिली तो समीरा की तलाश शुरू की। सब जगह तलाश आई फिर भड़ से किचन में घुसी तो सकपका गई। मगर दूसरे ही पल... लपक के फोटो समीरा के हाथ से छीन लिया और तड़की -

'आपा, तुम्हें शर्म नहीं आती...?'

'तुम्हें आती है?'

'हाँ... मुझे नहीं आती है... तो...'

'तो मुझे भी नहीं आती।'

'तो तुम्हें मेरा मंगेतर ही मिला था। जाके पहले आईने में अपनी शक्ल देख आओ तब अमश की तरफ देखना... हुँ...ह... ना सूरत ना शक्ल कुत्ते की नकल...।'

- समीरा विद्युत गति से उठी, सचमुच जा के आईना निहारा और तड़ाक से जमीन पर आईना दे मारा...।

चटाख की आवाज से घर के लोग चौंक पड़े, मगर हुआ कुछ नहीं। 'कुछ हुआ होगा।' सोच कर सो रहे। कोई सोच भी नहीं सकता यहाँ शीशे की आवाज में क्या-क्या टूटा है। दिल टूटा है, ख्वाब टूटा है और ख्वाब देखनेवाली आँखें भी। वह सायास हँसने लगी। ठहाके लगा-लगा के। हँसती रही और हँसती ही रही... रेशमा अचंभित सी देखती रह गई। फिर बोली

'अब हँसना बंद भी करो... हो गया...!'

'क्यूँ मेरा हँसना रोना भी अब तू तय करेगी...' और फिर ठहाके लगाने लगी। रेशमा एक अनजाने भय से काँप उठी। तकिया, चद्दर समेट हलीमा बाई के पास जा पहुँची। खैर, उसके बाद समीरा को कभी अपना होश ना रहा। सारी रस्मो-रिवायतों को ताक पे रख ड्योढ़ी लाँघ गई। बुर्का अलगनी में पड़ा अपने नसीब पर रोता रहता। और वह मोहल्ले में चौकड़ी भरती। कोठी की दीवारें, मीनारें, उसके कद के आगे छोटे पड़ गए। भावजों से वह अजब-अजब किस्म के मजाक करती रहती। जिसे सुन कर भावजें भी शर्म से गड़-गड़ जातीं। रेशमा के मंगेतर अमश का फोटो वह गाहे-बगाहे गायब कर देती। पूरा दिन घर में सजती-सँवरती। मोहल्ले में सबसे ज्यादा डिसूजा आंटी के वहाँ जाती, वहीं बनी रहती। अब्बू को घर की गिरती दीवारों से कोई सरोकार नहीं। ना वह घर में टिकते ना उनके सामने बातें आतीं। वैसे भी मुसलमानों की आधी जिंदगी परलोक सुधारने में ही निकल जाती है। अम्मी अलबत्ता पीर-फकीरों के आस्ताने पे ले-ले जा कर हाजिरी लगा आतीं। सिवा इसके भी कोई पंडित, ओझा, मुल्ला बाकी ना बचा था। गले से पाँव तक समीरा की देह गंडों और ताबीजों से लिसी पड़ी थी। कभी-कभी कुछ जहीन, तरीन लोग राय देते -

'मुल्ला-मौलवियों का ये मसला नहीं। किसी डाक्टर को दिखाओ।' वह दिखातीं। डाक्टर कुछ एक दवाएँ देते, कुछ नुस्खे तजवीजते और कहते इसकी जल्द आज जल्द शादी कर दो। एक दफा ऐसा ही हुआ। वह हत्थे से उखड़ गईं -

'व...ह...वा... कौन सी डिग्री खरीद के लाए हो डॉक्टर? उसे दिमागी खलल है और आप कहते हैं... अरे शादी अपनी जगह है, बीमारी अपनी जगह... आजकल के मुए डाक्टरों का कोई भरोसा नहीं...।'

डॉक्टर चौंका, फिर चीखा।

'ऐ... माँजी... जुबान सँभाल के... मैं कोई लफंगा, टपोरी नहीं हूँ... समझीं। मैंने ये तो नहीं कहा कि अपनी बेटी की शादी मुझसे कर दो।'

'ऐ... डॉक्टर के बच्चे, खबरदार जो मेरी बेटी का नाम जुबान पर लाया। क्लीनिक समेत उठवा लूँगी...?'

- बैठे हुए मरीजों ने बीच बचाव किया। समीरा बुर्के के भीतर से सब देखती रही कि अम्मी तमतमाती हुई उसका हाथ पकड़ बाहर खींच ले गईं। जब गाड़ी पर बैठीं तो समीरा ने अम्मी से धीरे से कहा -

'अम्मी कित्ता खूबसूरत है डॉक्टर, ऐसा ही दूल्हा ढूँढ़ना मेरे लिए...'

'चुपकर बेहया... जभी तो लोग इस तरह की बातें बनाते हैं... तेरी इन्हीं करतूतों की वजह से...?'

नौ-दस रोज से मिसेज डिसूजा का घर सूना पड़ा था। वह एक ही बात सोचे जा रही थीं कि लड़कियाँ गई कहाँ...? रजत पूछता रहता, समीरा आपा नहीं आतीं। शिप्रा दीदी कहाँ चली गई। मिस्टर डिसूजा भी गाहे-बगाहे पूछ ही लेते।

'तुम्हारी लड़कियाँ... नहीं दिखतीं भई...।'

एक दिन जी ना माना तो रजत इधर उधर टहल भी आया। पता चला समीरा बाहर ले जाई गई है। शिप्रा की माँ ने भी यह कह कर उसे टरका दिया कि 'उसके पिता उसे कहीं ले गए हैं...'

दो-चार रोज और बीते तो उन्हें कुछ संदेह हुआ। एक दिन वह शाम को झुटपुटे में निकल पड़ीं। आखिर दोनों को हुआ क्या? कहाँ आलोप हो गईं। ना खुद आईं। ना कोई

खबर। समीरा के घर पहुँची तो छलीमा बाई ने ले जा कर बड़े अदब के साथ बैठक में बैठा दिया। ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ा। समीरा की अम्मी दाखिल हुईं।

'अरे बेगम साहिबा, जहे नसीब आज आप हमारे गरीबखाने पर तशरीफ लाईं...'

'जी... ऐसी भी क्या बात है... बस यूँ ही...।'

'अरे है ना... हलीमा बाई चाय-वाय ले कर आओ जरा...'

'नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं, असल में समीरा काफी रोज से घर नहीं गई तो पूछने चली आई, मन लगा था, तबियत ठीक है ना...?'

'वही तो... बेगम साहिबा वह यहाँ है ही कहाँ। असल में पिछले हफ्ते में उसे ले कर गई कलियर शरीफ। हाजिरी लगवाने वहीं एक फकीर मोहतरम से दुआ सलाम हुई... समीरा को देखा, देखते ही ताड़ गए। बोले तुम्हारी बेटी दूसरी असमानी रूहों के फेर में है। मैंने रो-रोके सब बता दिया उन्होंने फौरन फाल खोली। और जानती हैं... अल्लाह तौबा... पाँच परियों और सात जिन्नों का साया जाहिर हुआ। तिस पर किसी ने शिबली अमल भी कराया हुआ है। मैं सिहर गई बेगम साहिबा। जभी तो हमारी बच्ची अपने आप में नहीं थी। बहरहाल अब ठीक हो जाएगी। उनकी दुआओं में सुनती हूँ शिफा है।'

'चलिए अच्छी हो जाए बेचारी, है कहाँ, जरा मिल लूँ उससे...।'

'यहाँ कहाँ बेगम साहिबा। वह तो वहीं है। फकीर बाबा के पास छोड़ आई हूँ। वह वहाँ रहेगी तो, तभी उस पर अमल करेंगे। चालीस दिन का चिल्ला खींचा है मौलवी साहब ने।'

'वहाँ और कोई है उसके साथ मतलब घर का कोई...।'

हलीमा बाई चाय-नाश्ता रख गईं। अम्मी चाय की प्याली उन्हें थमाती हुई बोली -

'अब बेगम साहिबा किसी के होने से क्या होता है, यहाँ से जाता ही कौन, किसे इतनी फुर्सत। मुझे भी कहाँ मोहलत? उन्हीं के सुपुर्द कर आई हूँ...'

'हे ईश्वर ये क्या हो रहा है। इन्हें अक्ल दे...' वह मन ही मन बुदबुदाईं।

भारी मन से चाय खत्म की ओर उठ खड़ी हुईं। जाते-जाते कह गईं 'आपने ये अच्छा नहीं किया। कैसी भी है वह बेटी है आपकी...'

जाने क्या था उस लहजे में, अम्मी को हठात एक धक्का सा लगा। वह बुत बनी बैठी रह गईं। मिसेज डिसूजा बाहर निकल गई।

'शिप्रा की भी टोह ले लूँ...' सोचती हुई उधर निकल गईं। पहुँची घर में प्रवेश किया तो स्तब्ध रह गई। घर में अजब सी फीकी शांति फैली पड़ी थी। दो-चार बच्चे आँगन के कोने में बैठे कंचे ढुलका रहे थे। ओसारे में बैठी थी शिप्रा की माँ जिनकी निगाहें खूब सजग और चौकन्ना प्रतीत हो रही थीं। उनके पहुँचने से हड़बड़ा गईं और अकबकाती हुई बोलीं

'आ...आ...ई ए... बहन जी, कैसे भूल पड़ीं...।'

'बस, ऐसे ही, इधर से गुजरी थी, सोचा शिप्रा का हाल पूछ लूँ... बहुत दिनों से आई भी नहीं पगली...'

'हम लोग थे ही कहाँ बहन जी, चले गए थे। दुर्गापुर। देवी दीन बाबा की कुटिया में। बड़े पहुँचे हुए संत हैं। सिर्फ हवा में हाथ लहरा दें और वस्तु हाजिर।

जरा इधर कान लाइए...।'

मिसेज डिसूजा आगे खिसक आईं, थोड़ा उनकी तरफ झुकीं -

'बहन जी, इस पर देवी आती हैं...'

'देवी आती हैं...?' वह सीधी बैठ गईं।

'हाँ, कामाख्या देवी...।'

'हे ईश्वर बचा इन लड़कियों को...।' धीमे से बड़बड़ाईं।

'जानती हैं, संत जी ने क्या कहा, कामाख्या देवी तृप्ति चाहती हैं। समझ रही हो ना... संत जी ने कहा बिना इनकी क्षुधा शांत किए इनका प्रकोप समाप्त नहीं होगा। इसलिए ये शांति कर्म आवश्यक है। वह बोले तीन दिन बीच छोड़ कर चौथे दिन एक हजार राशि की दक्षिणा के साथ बेटी को ला कर यहाँ छोड़ देना। मैं ये कार्य किसी चेले से करवा लूँगा... उस समय तो मैं कुछ नहीं बोली, मगर भीतर से मन राजी ना हुआ। पर-पुरुष आखिर पर-पुरुष। जाने कहाँ-कहाँ बाँटते फिरेंगे... मैंने इनके बापू से कहा - 'ये काम तुम्हीं कर डालो।'

'क्या...!'

'हाँ नहीं तो, वह थोड़ा संकोच खाए तो मैंने समझाया कि तुम उसे बेटी समझो ही क्यूँ। समझो, सामने देवी है। उन्हीं को प्रसाद चढ़ा रहे हो। बेटी का शरीर तो मात्र माध्यम है। तृप्ति तो देवी को ही होगी। फिर उनसे मुक्ति मिलते ही शिप्रा को ब्याह देंगे...। हमारे हजार रुपए भी बच जाएँगे...।'

'तुम लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। देवियों को भला मनुष्यों की क्या जरूरत पड़ने लगी...।'

'क्यूँ नहीं बहन जी... यदि ऐसा ना होता तो उर्वशी और मेनका सरीखी अप्सराएँ धरती पे पुरुषों का स्वाद चखने आतीं?'

'उफ, तुम लोगों से बहस करना ही मूर्खता है।'

'ये आप कैसी बात कर रही हैं...।'

'कुछ नहीं, बाई द वे शिप्रा हैं कहाँ...।'

'वही तो बता रही थी आप सुनो तब ना... वह ऊपर तीसरी मंजिल पर है।

इसके बापू देवी को प्रसन्न कर रहे हैं। वहीं हैं...।'

'क्या...?' उन्हें करंट लगा। आवेश में काँपने लगीं। फिर एकाएक तीव्र गति से उठीं और ऊपर जा रही सीढ़ियों की ओर भागी। पीछे-पीछे शिप्रा की अम्मा।

'बहन जी, सुनिए तो... देखिए हमारे मसले में मत पड़िए ये हमारे घर का मसला हे आपको इससे क्या... बेटी हमारी है... किंतु उन्होंने सुना ही कब? हाँफती, दौड़ती ऊपर पहुँची। दरवाजे से कान लगा कर आहट ली। झक्का-झोरी चल रही थी।

'छोड़ो बाबू...'

'चुप कर... आज कामाख्या देवी को भी मालूम हो जाएगा कि पुरुष क्या होता है...'

मिसेज डिसूजा ने जोर-जोर से दरवाजा भड़भड़ाना शुरू किया। शिप्रा की अम्मा आग उगल रही थीं। मगर मिसेज डिसूजा जुनूनी मुद्रा में दरवाजा पीटे जा रही थीं। शिप्रा के बाबू सहम गए। शिप्रा को अवसर मिला। दौड़ कर दरवाजे की साँकल हटाई और बाहर छलाँग लगाई। मिसेज डिसूजा से टकराती, गिरते-गिरते बची। सामने मिसेज डिसूजा

को देख चकित रह गई। फिर उनसे लिपट गई और चीख मार कर रो पड़ी। शिप्रा के पिता गड़े जा रहे थे। मिसेज डिसूजा गरजीं -

'भाई साहब... जी करता है पुलिस को फोन करके तुम्हारी सारी मर्दानगी निकलवा दूँ। मगर जाहिल... जानवर... तुम सब मर चुके हो। मर्यादाएँ... वर्जनाएँ सब घोल कर पी गए हो। इससे अच्छा तो इसे जहर दे देते...' फिर शिप्रा का हाथ थामा 'चल मेरे साथ...।'

और वह शिप्रा को घर ले आईं। काफी देर तक दोनों बैठक में खामोश बैठी रहीं। शिप्रा आँखें बंद किए सोफे पर निढाल सी पड़ी थी। मिसेज डिसूजा ने ध्यान से उसे देखा सोचा -

'शायद इसे शॉक लगा है...' वह उठीं, किचन में गईं। दो कप चाय ले के आईं और उसके बाजू में बैठ गईं -

'शिप्रा... ठीक हो ना...'

'मैं ठीक हूँ आंटी...'

'क्या तुम सचमुच ठीक हो गई... क्या वास्तव में तुम पर किसी देवी का प्रकोप था...?'

'नहीं आंटी, ना मुझ पर देवी का प्रकोप था ना कोई और ऑल इज राइट... मुझे कभी कुछ हुआ ही नहीं था...'

'तो वो पागलपन...'

'वो सब ढोंग था आंटी। वास्तव में मुझे अपनी ही उपेक्षाओं और तिरस्कार ने तोड़ दिया। आंटी, लड़कियों के माँ-बाप नहीं होते, उनका सिर्फ भाग्य होता है... नसीब है तो माँ-बाप भी साथ देते हैं परिवार भी अच्छा ही मिलता है...।' वरना सब...' कहते-कहते उसका गला रुँध गया। मिसेज डिसूजा ने आर्द्र भाव से उसे बाँहों में समेट लिया...।

'सँभालो अपने आपको।'

'आंटी... वो... वो माँ नहीं शत्रु है मेरी। भोर से रात तक घर के कार्यों में बैल की तरह जुती रहती हूँ। भाभियों को तो अम्मा काम के पास फटकने तक नहीं देतीं और मुझे जोते रहतीं। तिस पर काँटेदार बातें बोलती रहतीं तो सीधे जा कर तीर सी दिल पे लगतीं। कहती है 'तुझे तो कोई पूछता ही नहीं खूँटा गाड़े बैठी है... तेरी उम्र की

लड़कियाँ चार-चार बच्चों की माँ बन गई हैं और तू... भाभियों को अपने हाथों से सजाती हैं और मैं अगर ढंग से चोटी भी कर लूँ तो कहती है 'किसके लिए सज रही है... क्या लौंडे बटोरेगी? आप ही बताइए क्या कुँवारी लड़कियों का मन मुर्दा होता है। उन्हें किसी चीज का शौक नहीं होता। अच्छे दिखने की इच्छा नहीं होती...? क्या सजने-सँवरने के लिए ब्याहता होना अनिवार्य है। क्या वंचित रहना की कुँवारी लड़कियों का भाग्य है? केवल ब्याह ना होने के कारण हमारी सारी खुशियाँ और हमारे जीने के हक छीन लिए जाने चाहिए...? मैं अम्मा जी की कँटीली छुरियों से हलाल होते हुए घर के अनंत दायित्व निबाहती रही हूँ। अब टूट चुकी हूँ। एक रोज समीरा का हाल-चाल लेने चली गई। देखा, उसके विक्षिप्तपन ने कुछ ना सही उसे आजादी तो दी है। अपने ढंग से जीने की आजादी। विक्षिप्त होने के बाद तो उसकी दुनिया ही बदल गई। कितनी सज-धज के, कितनी उन्मुक्त होके रहती है। बगैर रोक-टोक सब जगह घूम आती। चाहे जो पहनती-ओढ़ती। बैठे-बैठे मैं बहुत देर तक सोचती रही कि मुझसे अच्छी ये पगली समीरा। कम से कम अपने हिस्से का बसंत तो जी रही है। किन्हीं-किन्हीं स्थितियों में अबूझ रह जाना भी लाभप्रद होता है आंटी। वहीं बैठी-बैठी मैंने समीरा की जिंदगी जीने का फैसला कर लिया। और वहाँ से आते-आते वैसा ही रूप साथ लिया।'

'ओह, तभी तेरी अम्मा कहती थी कि समीरा के यहाँ से आने के बाद तुझ पर प्रेत सवार हो गया।'

'हाँ, वह अभी तक यही जानती है कि समीरा का ही प्रेत मेरे पीछे लगा है...।'

'च...च...बहुत तकलीफ होती है... शिप्रा एक पराजित इंसान को खुद को जिलाए रखने के लिए किस-किस तरह के जोड़-तोड़ करने पड़ते हैं जिंदगी का झूला झूलने के लिए खुद ही किसी डाल की तरतीब करनी पड़ती है। बेहद अफसोस है... खासकर तुम लोगों के घरवालों को ले कर मैं चकित हूँ। तुम्हारे भाभी-भैया कहाँ है सब?'

'वो अब यहाँ क्यूँ रहेंगे। जब से मैंने हाथ समेट लिए सबके छक्के छूट गए। सारे दायित्व और घर गृहस्थी उन पर आ पड़ी ना, नौकरानी रह नहीं गई। सब भाग खड़ी हुईं। अलग घर ले कर रह रहे हैं। वे थोड़े ही अम्मा को करके खिलाएँगी...'

'बहुत खूब... जितना बेटी सह लेगी बहू थोड़े ही सहेगी... बाकी छोड़ो अब ये ढोंग-वोंग। ये समस्या का निदान नहीं, क्षणिक समाधान हो सकता है। किसी भी व्यक्ति को जब हद से ज्यादा एवाइड किया जाता है और उसकी इच्छा का तिरस्कार किय जाता है तो

वह व्यक्ति अवसाद में चला जाता है। ये एवाइडनेस भी एक तरह का प्रहार है, एक हत्या है।'

शुक्र है में समय पर पहुँच गई वर्ना... देखो, बेचारी समीरा कहाँ भुगत रही होगी। ऐसी ही जाने कितनी समीरा और शिप्रा लहू की मेहँदी लगाए घूम रही होंगी इस दुनिया के हर गाँव, शहर और घरों में। कैसे वे स्वयं को इन क्रूर हाथों से बचा पाती होंगी... सुनो... मैं एक प्राइवेट स्कूल में तुम्हारे लिए बात करती हूँ। तुम जा के वहीं पढ़ाओ। थोड़ा दिमाग भी बँटेगा... और खुलेगा। तुम्हारे घर के लोग अब कुछ नहीं बोलेंगे। ये तो दुनिया है जिसमें सुख है, वही वर्जित है। उस वर्जित सुख को भोगना भी एक कला है। इसे तुम्हें खुद सीखना पड़ेगा। उसे ऐसे ही सीखोगी। अपने रास्ते अपने आप ही तय करने पड़ते हैं बेटा। ...अब जाओ। कल सुबह नौ बजे आ जाना और अपने घर पर नार्मल रहना। वैसा ढोंग फिर मत करना। वर्ना तेरी अम्मा फिर किसी ओझा के यहाँ छोड़ आएगी...'

वह कुछ देर बैठी रही फिर उठ कर बाहर चली गई।

https://www.hindiadda.com/ab-bhi-ek-gaanv-me-rahati-hai-vah/